नवम अध्याय
विष्णुस्मृति की समसामयिकता

नवम-अध्याय
विष्णुस्मृति की समसामयिकता

स्मृतिग्रन्थों में जिस धर्म का विवेचन हम प्राप्त करते है, वह वस्तुत: समाज में समुचित रीति से रहने के लिए मनुष्य की जीवन प्रणाली का नाम है। स्मृतिग्रन्थों में जिस जीवन-प्रणाली का वर्णन हुआ है, वह वैदिक जीवन-प्रणाली को व्याख्यायित करता है। वेदों में हम सर्वत्र ऐसे सिद्धान्तों का उल्लेख पाते है जो मानव में सदाचार को महत्त्व प्रदान करते है। यदि मीमांसक मतानुसार वेदों को अपौरूषेय माना जाए तो निर्विवाद रूपेण इन स्मृति ग्रन्थों की सारी बातें निर्दोष सिद्ध होगी। यदि वेदों को पौरूषेय माना जाए तथा इसे ऋषि-मुनियों की रचना स्वीकार करें तो भी इन की बातें सर्वथा निर्दोष सिद्ध होती है क्योंकि ऋषि-महर्षि वीत राग होकर मानव मात्र के कल्याण के लिए हमेशा चिन्तन किया करते थे। अत: निश्चित रूप से वेदों मे आए हुए विचार सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण को ध्यान में रखकर निहित है। इसलिए उन पर आधारित स्मृतिग्रन्थ भी केवल मानव मात्र के श्रेय के लिए निर्मित हुए है।

स्मृतिग्रन्थ युगानुरूप भिन्न-भिन्न हुए है और सभी स्मृति ग्रन्थों के विचारों में स्थान-स्थान पर भिन्नता देखने को मिलती है। धर्म के सम्बन्ध में जो बातें स्मृति ग्रन्थों में मिलती है, उनकी प्रासंगिकता पर यत्र-तत्र प्रथम दृष्ट्या प्रश्नचिह्न लग जाता है। किन्तु दुराग्रह से रहित होकर यदि हम विचार करें तो धर्म के सम्बन्ध में स्मृतिग्रन्थों में आयी बातें सर्वथा प्रासंगिक लगेंगी। वास्तव में मानव की आचार विधि अथवा जीवन पद्धति का उल्लेख करने के कारण स्मृतियों में विवेचित धर्म आज भी अपनी समसामयिकता बनाए हुए है। स्मृति ग्रन्थों में जो धर्म के लक्षण बताए गए है, उन्हें अपने जीवन में उतार कर ही मनुष्य सच्चे अर्थो में मनुष्य कहलाने का अधिकारी है।

स्मृति ग्रन्थों में धर्म के अन्तर्गत विवेचित यज्ञ, अहिंसा आदि विषयों की प्रासंगिकता आज के युग में यद्यपि हास्यास्पद लग सकती है किन्तु यदि हम गम्भीरतापूर्ण विचार करें तो यज्ञादि की महत्ता भी सिद्ध हो जाती है। यज्ञों के करने से मानव का चित्त शुद्ध होता है, साथ ही समस्त प्रकृति भी शुद्ध हो जाती है। आज के वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि सबसे दुर्लभ और सबसे उपयोगी ओजोन वायु की उत्पत्ति में यज्ञ-धूम सर्वाधिक प्रभावशाली होता है। यह देखा गया है कि जिस क्षेत्र में यज्ञ अधिक होते है उस क्षेत्र में वर्षा का सन्तुलन बना रहता है। उस क्षेत्र में वनस्पतियों की उत्पत्ति भी अधिक

मात्रा में होती है। इस प्रकार स्मृतिग्रन्थोक्त यज्ञ करना आज के युग में भी प्रांसगिक है।

स्मृतिग्रन्थों में अहिंसा को धर्म के अन्तर्गत स्थान दिया गया है। स्मृतिग्रन्थों में आया हुआ अहिंसा शब्द विशिष्ट अभिप्राय को अभिव्यक्ति करता है। इस अभिप्राय को अभिव्यक्त करने वाला अहिंसा तत्व आज के युग में भी प्रासंगिक है। आज जिस रूप से हम समाज में एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति का अथवा एक वर्ग को दूसरे वर्ग के खून का प्यासा देखते है, यदि स्मृतिग्रन्थों की अहिंसा का पाठ उन्हें पढ़ाया जाए तो निश्चित रूपेण समाज में भ्रातृत्व का स्वाभाविक विकास होगा। शौच, इन्द्रियनिग्रह, दान, दम, दया, क्षान्ति आदि धर्म के सार्वकालिक तत्त्व है और उनकी प्रासंगिकता पर किसी प्रकार का प्रश्न नहीं उठ सकता है।

स्मृतिकारों ने कलियुग के मनुष्यों के लिए दान को सर्वोपरि धर्म माना हैं। दान को महत्त्व प्रदान करने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य केवल अपनी इच्छापूर्ति में ही न लगा रहे, बल्कि वह अपनी अर्जित सम्पत्ति में से कुछ अंश जरूरत मंद लोगों को भी प्रदान करे। ऐसी भावना होने पर मानव का मानव के प्रति सदाशयता का भाव प्रबल होगा, जिसकी कमी आज हम समाज में देखते हैं। इस प्रकार स्मृतिग्रन्थों में प्रतिपादित धर्म का अंगभूत दान भी पूर्णतया समाज में प्रासंगिक एवं समसामयिक हैं।

आज धर्म शब्द का जिस रूप में गलत अर्थ लगाया जा रहा है, वह निश्चित रूप से स्मृतियों में आए हुए धर्म शब्द के अर्थ से नितान्त भिन्न है। आज धर्म शब्द का जो अर्थ किया जा रहा है वह सम्प्रदाय अथवा पन्थ विशेष का वाचक है। उदाहरण के लिए हिन्दू धर्म अलग वस्तु है और हिन्दू सम्प्रदाय अलग वस्तु। जब हम हिन्दू धर्म का उल्लेख करते है तो उससे जिस जीवन प्रणाली का बोध होता है, वह वैदिक अथवा सनातन जीवन शैली को द्योतित करता है। स्मृतियों में विवेचित धर्म शब्द निश्चित रूप से आज के समाज में प्रयुक्त धर्म शब्द से भिन्न है। यदि कोई व्यक्ति उसे स्मृति ग्रन्थों में प्रतिपादित धर्म के साथ जोड़कर देखना चाहता है तो वह भारी भ्रम में है। इस प्रकार स्मृतियों में विवेचित धर्म तत्त्व आज भी समसामायिक हैं।

विष्णुस्मृति में विवेचित विषयों में से कुछ विषयों की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिह्न लगाया जा सकता है। उन्हीं विषयों में से वर्ण व्यवस्था भी एक है। प्राचीन साक्ष्यों से ऐसा सङ्केत मिलता है कि कर्म के अनुसार वर्ण व्यवस्था स्थापित हुई थी, किन्तु आगे चलकर उस वर्ण व्यवस्था ने जन्म के अनुसार

वर्ण-निर्धारण के स्वरूप को अपना लिया। किसी विशिष्ट वर्ण या जाति में जन्म लेकर कोई व्यक्ति तथाकथित उत्कृष्ट या निकृष्ट जाति का माना जाने लगा। निकृष्ट कार्य करने पर भी उत्कृष्ट जाति मे जन्म लेकर वह समाज में पूज्य हुआ। बाद में चलकर यह सामाजिक व्यवस्था समाज के लिए अभिशाप के रूप मे प्रकट हुई। इसी कारण वैदिक धर्म के विरोध स्वरूप अनेक दार्शनिक सम्प्रदाय उठ खड़े हुए। इनमें बौद्ध तथा जैन प्रमुख है। परन्तु स्मृति ग्रन्थों में प्रतिपादित जिस वर्ण व्यवस्था का हम साक्षात्कार करते हैं उसके अनुसार उच्च जाति में जन्म लेकर निम्न कार्य करने वाला व्यक्ति समाज में आदरणीय नहीं होता था। अत: तत्कालीन वर्ण व्यवस्था में कुछ त्रुटियों के बावजूद वह व्यवस्था एक व्यवस्थित समाज के स्वरूप को अभिव्यक्त करती है। निश्चित रूप से जाति व्यवस्था की अपेक्षा वर्ण व्यवस्था समाज के लिए श्रेयस्कर थी।

विष्णुस्मृति ने ब्राह्मण के लिए जिन कर्त्तव्यों का उल्लेख किया है, निश्चित रूप से उनकी प्रासंगिकता स्वत: सिद्ध हो जाती है। अध्ययन, अध्यापन, तप, दान आदि जो ब्राह्मणों के कर्त्तव्य माने गये है। यदि नि:स्पृह भाव से ब्राह्मण इन कर्त्तव्यों का पालन करें तो वे समाज में आदरणीय हो सकते है। परन्तु यदि कोई ब्राह्मण इन कर्त्तव्यों का पालन न करे तो वह आदरणीय नहीं होना चाहिए। स्मृति में क्षत्रिय और वैश्य के लिए क्रमश: रक्षा, राज्य संचालन तथा कृषि वाणिज्य कर्म को मान्यता दी गई है। यह ठीक है कि आज के युग में सभी क्षत्रिय न केवल रक्षा और राज्य संचालन से अपना जीवन निर्वाह कर सकते हैं और न ही वैश्य केवल कृषि और वाणिज्य के द्वारा। ऐसी परिस्थिति आने पर स्वयं स्मृतिकारों ने निर्देश दिया है कि वे दूसरे वर्ण के लिए निर्धारित कर्मों के द्वारा अपना जीवन निर्वाह कर सकता है। आज आवश्यकता है कि स्मृति-संकेतित उन वैकल्पिक उपायों को भी प्रधान कर्म स्वीकार कर के उसके अनुसार जीवन यापन करने के लिए विविध वर्णों को प्रोत्साहित करें। स्मृति द्वारा प्रतिपादित वर्ण व्यवस्था को आज के सन्दर्भ में परिवर्तित करते हुए उसके अनुरूप सामाजिक व्यवस्था का निर्धारण करना अपरिहार्य है। स्मृति ग्रन्थों में वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में जो कुछ उत्तम बातें है उनके अनुसार समाज एक व्यवस्थित रूप प्राप्त सकता है। इतना अवश्य है कि अस्पृश्यता आदि कुछ सिद्धान्तों को प्रासंगिक न माना जाए।

स्मृति ग्रन्थों में हम जिस आश्रम व्यवस्था का उल्लेख पाते है उसको आज के सन्दर्भ में व्यावहारिक रूप से प्रासंगिक एवं समसामायिक सिद्ध कर पाना पूर्णतया संभव नहीं है। यद्यपि स्मृतियों की आश्रम व्यवस्था मनुष्य के

आध्यात्मिक लक्ष्य को लक्षित करने वाली है। यह व्यवस्था मनुष्य जीवन के लिए जो अन्तिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है, उसे प्राप्त करने के लिए दिशा-निर्देश देती है। फिर भी इस व्यवस्था में कुछ ऐसे विवेचन है जिनका यथोचित निर्वाह कर पाना आज संभव नहीं लगता। पुनरपि यदि चारों आश्रमों के ऊपरी ढांचे पर विचार किया जाए तो संभवतः वानप्रस्थ को छोड़कर अन्य सभी आश्रमों की प्रासंगिकता व समसामायिकता सिद्ध की जा सकती है।

स्मृतिकार के अनुसार मनुष्य जीवन में प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य का होता है। स्मृतिकार में वेदाध्ययन पर विशेष बल दिया गया है, परन्तु आज के युग में वेदों के अतिरिक्त भी ज्ञान के अनेक शास्त्र विद्यमान हैं। पुनरपि स्मृतिकार ने ब्रह्मचारी के लिए अध्ययन सर्वोपरि माना है, वह आज भी शत-प्रतिशत प्रासंगिक है। जीवन के प्रारंभिक दिनों में उचित रीति से अध्ययन के द्वारा ज्ञान प्राप्त करना सब के लिए नितान्त आवश्यक है। अध्ययनार्थ गुरू के प्रति श्रद्धाभाव का होना भी परम आवश्यक है। आज हम जिस रूप में छात्र वर्ग में उच्छृँखलता देखते है, उसका निराकरण तभी हो सकता है जब छात्रों में गुरूओं के प्रति श्रद्धा भावना जागृत हो। स्मृतिग्रन्थानुरूप नैष्ठिक ब्रह्मचारी होना आज संभव नहीं है जो जीवन पर्यन्त गुरू सेवा में लगे रहे। ब्रह्मचारियों के लिए जिन कर्त्तव्यों का उल्लेख हम स्मृति ग्रन्थों में प्राप्त करते हैं, वे आज भी प्रासंगिक एवं समसामयिक है। उन्हें इन्द्रिय निग्रही होने के साथ-साथ विलासिता के पदार्थो से दूर रहना चाहिए और सभी चीजों का त्यागपूर्वक उपभोग करना चाहिए।

विष्णुस्मृतिकार ने गृहस्थ आश्रम के लिए जिन मौलिक बातों की चर्चा की है वे आज भी प्रासंगिक हैं। मनुष्य को गृहस्थ आश्रम में रहकर धर्म, अर्थ और काम तीनों का समुचित रीति से उपभोग करना चाहिए। स्मृति में कहा गया है कि देवता, अतिथि, सेवक, पितर एवं आत्मा को जो मनुष्य सन्तुष्ट नहीं रखता वह जीता हुआ भी मरे हुए के समान है -यह बात आज भी प्रासंगिक है। पंचमहायज्ञों की सम सामयिकता एवं प्रासंगिकता सर्वसाधारण समाज हेतु आज सन्देहास्पद प्रतीत होती है। स्मृति का यह सिद्धान्त आज भी पूर्णतया प्रासंगिक है कि माता-पिता तथा गुरू की भक्ति करने वाला गृहस्थ निश्चित रूप से पुण्यभाक् है। गृहस्थ के लिए धर्मपूर्वक धनोपार्जन करने की बात, सत्यवादिता, आत्मतत्व के ध्यान में लीन रहने की बातें आज भी समसामयिक हैं। स्मृतिकार ने गृहस्थों के लिए अतिथि सेवा तथा दान को महत्त्वपूर्ण माना है, जो आज के सन्दर्भ में पूर्ववत् प्रासंगिक है।

वानप्रस्थ आश्रम यद्यपि आज के सन्दर्भ में प्रांसगिक प्रतीत नहीं होता पुनरपि वानप्रस्थियों के लिए जो नियम बताये गए है वे उपयोगी हैं। अपने जीवन के तीसरे चरण में सांसारिकता से अपने को विमुख कर ले, यह आज भी पहले की तरह प्रासंगिक है। मनुष्य जब सांसारिक वस्तुओं का उपभोग कर लेता है तो उसे बाद में अपने को उन पदार्थो से मुक्त भी कर लेना चाहिए। इस तरह की स्थिति में उसे वन में निवास करना आवश्यक नहीं है। वह समाज में रहकर भी इस नियम का पालन कर सकता है। प्राणियों का कल्याण करना, दान देना, मितभोजी होना आदि बातें सर्वथा आज भी उचित हैं। चान्द्रायण आदि व्रत की जो बातें कही गई है वे आज के सन्दर्भ में संभव व प्रासंगिक नहीं है।

स्मृति ग्रन्थों में प्रतिपादित संन्यास आश्रम से सम्बन्धित भिक्षा पात्र आदि लेकर याचक वृत्ति अपनाना समसामयिक नहीं है। परन्तु सभी पदार्थो के प्रति मोहत्याग, दयाभाव, क्रोध तथा असत्य का अभाव आदि सद्गुणों का निर्देश संन्यासियों के लिए जो किया गया है वे आज भी जीवन के चतुर्थ चरण में उपयोगी है। इस प्रकार विष्णुस्मृतिकार ने आश्रम व्यवस्था के सन्दर्भ में जो नियमोल्लेख किये है वे सभी आज भी किंचित् परिवर्तन परिवर्धन के साथ समसामयिक है।

यद्यपि अन्य स्मृति ग्रन्थ चारों आश्रमों का विवेचन करते है किन्तु विष्णुस्मृति गृहस्थाश्रम पर अधिक केन्द्रित है क्योंकि धर्म, अर्थ एवं काम तीनों ही गृहस्थाश्रम के केन्द्रबिन्दु हैं। स्मृति के अनुसार धर्मानुमोदित अर्थ एवं काम ही ग्राह्य है। स्मृति में गृहस्थों के लिए प्रतिपादित दान, यज्ञ, आचार, इन्द्रियनिग्रह आदि आज भी निर्विवाद रूप से प्रासंगिक है। मनुष्य को अन्त में मोक्ष प्राप्ति कर के संसार के आवागमन से मुक्त हो जाना चाहिए - मनुष्य मात्र को इसी तथ्य की प्राप्ति के लिए यह स्मृति ग्रन्थ इंगित करता है।

स्मृतिग्रन्थों में जिन षोडश संस्कारों का विवेचन प्राप्त होता है उसकी प्रासंगिकता भी आज के सन्दर्भ में सिद्ध की जा सकती है। स्मृति के अनुसार गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक के संस्कारों को विधि-विधानपूर्वक करना चाहिए। आज के वैज्ञानिक युग में यद्यपि यह संभव नहीं लगता फिर भी यदि इनका नियमानुरूप पालन किया जाए तो समाज संयमित व व्यवस्थित हो जाएगा। उपनयनादि संस्कार के अनन्तर वेदाध्ययन का जो उल्लेख स्मृतिकार ने किया है उसका पालन करने से निश्चित रूप से विद्याध्ययन और विद्यार्जन अधिक उपयोगी हो जाएगा।

विष्णुस्मृतिकार ने आचार के सम्बन्ध में जिन तथ्यों का उल्लेख किया है प्राय: वे सभी प्रासंगिक हैं। किन्तु दुराचारों के लिए जिन दण्ड अथवा प्रायश्चित्तों का उल्लेख किया है, उनकी प्रांसगिकता पर प्रश्नचिह्न लगता है। स्मृतिकार ने विविध आचरणों के पालन का अल्प मात्रा में उल्लेख किया है, किन्तु दुराचरण करने पर उन्होंने दण्ड आदि का विधान विस्तार से किया है। इस प्रकार विष्णुस्मृति में निषेधार्थक बातें अधिक हैं पुनरपि यम और नियम के अर्न्तगत जिन विषयों का विवेचन स्मृति में मिलता है वे हर युग के लिए पूर्णतया प्रांसगिक है। इसी तरह मनुष्यों के दैनिक क्रिया-क्रलाप के सम्बन्ध में जो बातें कही गई हैं वे सिद्धान्त रूप में तो निश्चित रूपेण प्रासङ्गि.क है किन्तु व्यवहार की दृष्टि से आज के वैज्ञानिक युग में उनकी प्रासंगिकता संदेहास्पद हो गई है। विष्णुस्मृति में दैनन्दिन क्रिया-कलाप के लिए जो कार्य-तालिका दी गई है उसका पालन करने के लिए व्यक्ति को दिन भर का समय चाहिए। ऐसी स्थिति में अन्य कार्य कब कर पाएगा। अवकाश के दिनों में यह कार्य तालिका निश्चित रूप से आदर्श मानी जा सकती है फिर भी दैनिक जप, होम आदि अप्रासंगिकता की कोटि में रह जाएँगे। यद्यपि इन्हें येन केन प्रकारेण प्रासंगिक व समसामयिक सिद्ध किया जा सकता है पुनरपि नास्तिकता से युक्त संसार में इसकी प्रासंगिकता को अधिकांश लोग स्वीकार ही नहीं करेंगे। स्मृतिकार ने अतिथि सेवा को बहुत महत्त्व प्रदान किया है जो आज के युग के लिए प्रशंसनीय कहा जाएगा। आज यदि सभी मनुष्य अतिथि सेवा परायण हो जाएं तो विश्व बन्धुत्व की भावना प्रबल होगी, जिस का आज अत्यन्त अभाव दृष्टिगोचर होता है।

विष्णुस्मृतिकार ने जिन वस्तुओं को अभक्ष्य की कोटि में रखा है उन में से प्राय: सभी आज भी अभक्ष्य ही हैं। यद्यपि स्मृति में मांस भक्षण का साक्षात् निर्देश या निषेध नहीं किया गया है फिर भी मांसभक्षण न करने वाले की प्रशंसा की गई है। आज के वैज्ञानिक भी इस तथ्य को स्वीकार करने लगे हैं कि निरामिष व्यक्ति दीर्घ जीवी होते हैं। स्मृतिकार ने विविध प्रकार की सुराओं का भी उल्लेख किया है। सुरापान करने वाले को महापातकी माना है। मद्यपान अनेक दुष्कर्मों का जनक है अत: इसके विरोध में स्मृतिकारों ने जो वक्तव्य दिये है वे सभी पूर्णतया प्रासंगिक और समसामयिक हैं। सुरापान करने वाले के लिए जिन प्रायश्चित्तों का उल्लेख स्मृति में उपलब्ध होता है उन्हें आज के युग में प्रासंगिक नहीं माना जा सकता। इस सन्दर्भ में स्मृति ग्रन्थों में जिन प्रायश्चित्तों का विधान किया गया है वे सभी अतिशयोक्तिपूर्ण है अत: उनका अनुपालन उसी रूप से आज सम्भव नहीं है पुनरपि स्मृतिकारों ने

प्रायश्चित्त के माध्यम से लोगों को दुष्कर्म से नियन्त्रित करने का प्रयास किया है।

विष्णुस्मृतिकार ने चोरी, ठगी, रिश्वत लेना आदि अपराधों को निन्दनीय माना है, उनके लिए अनेक विध दण्डों का भी प्रावधान किया है। स्मृति में वर्णानुसार दण्ड का विधान है जो आज के समाज में प्रासंगिक नहीं है। स्मृतियों के अनुसार यदि राजा स्वयं राजा अपराध करे तो उसे साधारण मनुष्यों से हजार गुना अधिक दण्ड होता है, अतः आज जिस रूप से शासक वर्ग अपराध में लीन है उनको सुधारने के लिए स्मृति की प्रासंगिकता निर्विवाद रूप से सिद्ध है। स्मृतिकार के अनुसार जो चोरों की सहायता करता है उसे भी चोर के समान ही दण्ड देने का विधान है। यह नियम आज भी पूर्णतया प्रासंगिक है। स्मृतिग्रन्थोक्त रिश्वतखोरों को देशनिष्कासन दण्ड से दण्डित करने का विधान भी पूर्णतया समसामायिक है। स्मृतिकार ने जिस रूप में हिंसा की निन्दा की है वह आज के युग में भी पूरी तरह प्रासंगिक है परन्तु उनके लिए जिन प्रायश्चित्तों का विधान किया गया है वे प्रासंगिक नहीं हैं। इसी प्रकार ब्राह्मण आदि की हत्या करने पर अधिक दण्ड तथा अन्य जाति के व्यक्तियों को मारने पर कम दण्ड का विधान भी अप्रासंगिक है। स्मृति का यह विधान आज भी पूरी तरह समसामयिक व प्रांसगिक है कि अवध्य को मारने से पाप होता है तथा वध्य को छोड़ने से भी पाप होता है।

विष्णुस्मृतिकार ने जार कर्म की निन्दा की है, वह निन्दा आज भी पूर्ववत् प्रासंगिक है। परन्तु जार कर्म रोकने के लिए जिस प्रकार के दण्ड अथवा प्रायश्चित का विधान किया है वह अमानवीय है। झूठी गवाही देने वाले की निन्दा तथा झूठ बोलने वाले को पापी कहा गया है, ये वक्तव्य आज भी समाज में प्रासंगिक हैं। वनस्पतियों व वृक्षों को हानि पहुंचाने वाले को दण्डित करना भी पूर्णतया आज के समाज में प्रासंगिक है। पर्यावरण रक्षा में निरत आज के युग के लिए स्मृतियों की बातें सर्वथा औचित्यपूर्ण हैं। आज जिस रूप में पर्यावरण की रक्षा के लिए अनेक योजनाएं बनायी जा रही हैं उन्हें देखने से हम स्मृति कार की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते।

विष्णुस्मृतिकार ने विभिन्न निन्दित कर्मों को सूची बद्ध करते हुए उन्हें महापातक अथवा उपपातक के अन्तर्गत रखा है। इनमें से अधिकांश पाप कर्म आज भी उसी तरह निन्दनीय है। परन्तु उन अपराधियों को दिये जाने वाले दण्ड या प्रायश्चित के जो विधान है वे सभी आज के समाज में प्रासंगिक व समसामायिक नहीं है। आचरण के सम्बन्ध में स्मृतिकार ने जो बातें कही हैं

उनमें से अधिकांश आज भी पूर्णतया प्रासंगिक व उपयोगी है। स्मृतिकार के निर्देशों के अनुसार आचरण करने पर मनुष्य सदाचार से युक्त हो जाएंगे।

विष्णुस्मृति की आज के सन्दर्भ में विवाह प्रणाली, स्त्री अपत्यादि के दायभागादि में भी किंचिद् प्रासंगिकता दृष्टिगोचर होती है। क्योंकि यह स्मृति मुख्यतया गृहस्थ धर्म का ही विवेचन करती है। गृहस्थाश्रम विवाह संस्कार पर आश्रित है। स्मृतिकार ने विस्तार से विविध विवाह प्रणालियों का उल्लेख किया है। कुछ विवाहों को सामाजिक दृष्टि से उचित कहा है तथा कुछ को समाज में निन्दित माना है। प्राय: सभी स्मृतिकार ब्राह्म, दैव, आर्ष तथा प्राजापत्य विवाहों को उचित मानते हैं लेकिन आसुर, गान्धर्व, राक्षस तथा पैशाच विवाह की निन्दा करते हैं। अष्टविध विवाहों की उपर्युक्त परिपाटी आज समाज में प्रचलित नहीं है।

स्मृतिकार ने यद्यपि स्त्री-वर्ग की आदरास्पद स्थिति का वर्णन किया है पुनरपि उनके निन्दनीय कर्मों का भी उल्लेख किया है। वे निन्दनीय कर्म स्मृति कालीन समाज में भी गर्हित समझे जाते थे और आज भी वे उसी प्रकार निन्दनीय है। उन निन्दनीय कर्मों के कारण वैसी स्त्रियां समाज में आदर नहीं पा सकती थी, आज भी उन्हें उन दुर्गुणों के कारण सम्मान के दृष्टि से नहीं देखा जाता। स्मृतिकार ने अनेक प्रकार के वर्ण संकर पुत्रों का उल्लेख किया है वे निन्दनीय है परन्तु आज अन्तर्जातीय विवाह होने लगे हैं एतदर्थ ऐसे वर्ण संकरों का उल्लेख करना उचित नहीं माना जाएगा।

विष्णुस्मृति में सम्पत्ति विभाजन अथवा दाय का विवेचन विस्तारपूर्वक किया गया है। पैतृक सम्पत्ति में पुत्रों तथा पुत्रियों के दाय का निर्धारण करने में प्राय: स्मृतियों मे मतभेद पाया जाता है। स्मृतिकार यद्यपि ज्येष्ठपुत्र को सर्वोपरि मानते हैं पुनरपि छोटे पुत्रों को भी वे सम्पत्ति का अधिकारी मानते हैं। पुत्रियों को भी वे न्यूनाधिक रूप से सम्पत्ति की अधिकारिणी मानते हैं। यदि सन्तान केवल पुत्रियां ही हैं तो व्यक्ति की सम्पत्ति पर विवाहोपरान्त भी पुत्रियों का ही अधिकार होता है। आज भी समाज में दायभाग विभाजन में प्राय: यही स्थिति है। इसकी प्रासंगिकता में किसी भी प्रकार का विरोध नहीं है।

स्मृतिकार ने पितृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था का उल्लेख किया है। उस परिवार एवं समाज को ही उन्होंने उत्तम माना है जिसमें स्त्रियों को आदर प्राप्त हो। स्मृतिकार ने जो बात कही है कि जिस कुल में स्त्री प्रसन्न रहती है वह कुल कल्याण से युक्त रहता है, आज भी पूर्णतया प्रासंगिक है। स्मृतिकार ने स्त्रियों की रक्षा को बहुत महत्त्वपूर्ण माना है। यहां स्त्रियों की रक्षा का

अभिप्राय स्त्रियों के चरित्र की रक्षा से है। जिस परिवार या समाज की स्त्री अरक्षित होती है वह परिवार या समाज किसी भी तरह अपने धर्म की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकता। स्मृतिकार ने पति-पत्नी के सम्बन्ध को इतना पवित्र माना है कि वे इसे जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध मानते हैं। इसी कारण दोनों में से किसी के लिए भी दूसरे विवाह को उचित नहीं मानते हैं। स्मृतिकार ने कुछ अत्यन्त अपरिहार्य कारणों के आ जाने पर ही विवाह विच्छेद की जो बात कही है, उसकी प्रासंगिकता आज भी सैद्धान्तिक रूप से सिद्ध की जा सकती है।

विष्णु स्मृतिकार ने गुरू, आचार्य तथा माता-पिता को जिस रूप में आदर देने की बात कही है उसकी प्रासंगिकता के सन्दर्भ में किसी तरह का प्रश्न उठाना उचित नहीं होगा। स्मृतिकार ने माता को सबसे आदरणीय माना है जो कि पूर्णतया उचित है। किसी भी स्थिति में मनुष्य माता के ऋण से उऋण नहीं हो सकता। पिता की अपेक्षा आचार्य को अधिक आदरणीय माना जाना भी स्मृति ग्रन्थों की हर युग के लिए प्रासंगिकता सिद्ध करता है। आज युवा वर्ग में जो उद्दण्डता का भाव आ रहा है उसको यदि कोई नियन्त्रित कर सकता है तो वह आचार्य ही हो सकता है। किन्तु आज आचार्यों के प्रति आदर भाव की कमी के कारण ही युवा वर्ग इतना उच्छृँखल बना हुआ है।

स्मृतिग्रन्थों में एक सामाजिक विषमता का हमें दर्शन होता है जिसकी प्रासंगिकता को सिद्ध कर पाना थोड़ा कठिन हैं, यह विषमता पुत्री को पुत्र से हेय मानना है। स्मृतिकालीन समाज पुरूष प्रधानता को अभिव्यक्त करता है, अतः उसमें ऐसी बातें प्राप्त होती हैं जो पुत्री को पुत्र से निम्न स्थान प्रदान करती है। पुत्री को दाय में पुत्र से कम भाग मिलना आज के सामाजिक सन्दर्भ में सर्वथा अप्रासंगिक है।

स्मृतिकार ने वर्ण संकरों का उल्लेख करते हुए उनकी जो निन्दा की है वह बहुत उचित प्रतीत नहीं होती क्योंकि उसमें उस वर्ण संकर सन्तान का क्या दोष है? वस्तुतः उस व्यक्ति की निन्दा होनी चाहिए जिसने इस तरह के के वर्ण संकर को उत्पन्न करने की परिस्थिति को तैयार किया। यदि वर्ण व्यवस्था या जाति व्यवस्था को आज नई दृष्टि से देखते हुए उसमें अपेक्षित सुधार कर लिया जाए तो उसकी प्रासंगिकता समाजोपयोगी बन सकती है। स्मृतिकार ने अनुलोम विवाह से उत्पन्न सन्तान को उचित माना है किन्तु प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न सन्तान को अनुचित माना है, जो आज के सन्दर्भ में विवेच्य प्रतीत नहीं होती। इस प्रकार स्मृतिकार ने निन्दित कर्मो के विषय में

जिन प्रायश्चित्तों एवं दण्ड का विधान किया है उनका आज की परिस्थिति में अनुकूल परिवर्तन कर के उनकी प्रासंगिकता को सिद्ध किया जा सकता है। यद्यपि विष्णु स्मृति में उल्लिखित सभी नियमोपनियम वर्तमान काल में पूर्णतया प्रासंगिक एवं समसामयिक सिद्ध नही होते है पुनरपि सैद्धान्तिक रूप में इनका महत्व सर्वदा अक्षुण्ण एवं सार्वकालिक बना रहेगा।